पाँचवाँ अध्याय

उपेंद्रनाथ 'अश्क' के एकांकियों की साहित्यिक दृष्टि से विशेषताएँ

उपेंद्रनाथ 'अश्क' के एकांकियों की साहित्यिक दृष्टि से विशेषताएँ

'अश्क' जी हिंदी नाट्य क्षेत्र में एक सफल नाटककार रहे हैं। उनके एकांकी नाटकों में पारिवारिक और सामाजिक समस्याओं की व्यवहारिक व्याख्या प्रस्तुत की है। उन्होंने भारतीय जन-जीवन की समस्याओं का चित्र प्रस्तुत कर एकांकी नाटकों को वर्तमान से जोड़ा है। एकांकीकार का उद्देश्य होता है कि प्राचीन संस्कृति का संदेश प्रस्तुत करना। एकांकी का जीवन तिरछी चितवन, हलकी मुसकान तथा दो आँसुओं का जीवन है। जगदीशचंद्र माथुर ने लिखा है - ''जान पड़ता है, 'अश्क' नाटक लिखते समय जब एक आधारभूत भावना के लिए आँख दौड़ाते हैं तो वे कल्पना की आँख नहीं, स्मृति के नेत्र होते हैं।''[1]

'अश्क' ने मध्यवर्गीय जीवन को निकट से देखा है। इस वर्ग की सबसे महत्त्वपूर्ण समस्या प्रेम और विवाह की है। इसके साथ व्यक्ति और परिवार की अन्य छोटी-मोटी समस्याओं को संबद्ध किया है। इन सभी समस्याओं के मूल में असहाय और विवश नारी के चित्र हमारी संवेदना को अधिक स्पर्श करते हैं। 'अश्क' ने अपने समस्या एकांकी नाटकों में नारी को महत्त्व दिया है। नारी के प्रेम और विवाह को केंद्र मानकर उन्होंने उसकी महत्त्वाकांक्षा, कुंठा, पीड़ा, विवशता, द्वंद्व और विद्रोह को विश्लेषित किया है। अश्क कहते हैं - ''मैंने जीवन की विभिन्नता का आभास पाया है और थोड़ा बहुत अनुभव भी प्राप्त किया है। समाचार पत्र के एक साधारण रिपोर्टर के रूप में जीवन संघर्ष आरंभ करके मैंने अध्यापक अनुवादक, संपादक, वक्ता, विज्ञापन-विशेषज्ञ, वकील, रेड़ियो, आर्टिस्ट अभिनेता और सिनारिस्ट की हैसियत से तरह-तरह के अनुभव प्राप्त किए हैं, तरह-तरह के लोगों से मिला हूँ और असंख्य दुःखद अथवा सुखद घटनाएँ मेरे मन में सुरक्षित पड़ी हैं।''[2] 'अश्क' हिंदी के सर्वाधिक सफल एकांकी समस्या नाटककार हैं। उनमें समस्यों को पहचानने की शक्ति तथा उसके प्रतिपादन क्षमता है। सर्वप्रथम 'अश्क' ने ही साहित्यिकता, सुरूचि तथा अभिनेयता का सानुपात समन्वय कर हिंदी नाटक को एक नई दिशा दी है।

'अश्क' जी के एकांकी क्षेत्र में सामाजिक, राजनीतिक, मनोवैज्ञानिक समस्याओं का प्रसहन, सांकेतिक आदि शैलियों का प्रयोग किया गया है। 'अश्क' जी के एकांकी नाटकों में रंगमंच की उपेक्षा नहीं है। अतः विवेच्य समस्या एकांकी नाटकों में साहित्यिक दृष्टि से विशेषताएँ निम्नलिखित हैं -

5.1 कथावस्तु -

'अश्क' मूलतः समस्या एकांकी नाटककार हैं। समाज के बीच में खड़े होकर उसकी समस्याओं को यथार्थ भूमि पर रखने का प्रयास उपेंद्रनाथ 'अश्क' ने किया है। समस्या नाटकों की कथानक का चुनाव समसमायिक जीवन की किसी समस्या विशेष के आधार पर होता है। जीवन की विविधता के माध्यम से नाटकीय वस्तु चयन करना, अत्यंत कठिन है। जीवन में अनेक घटनाएँ आती रहती हैं। उनमें से कौन-सी घटना नाटक का आधार बन सकती है, इसका चुनाव नाटककार की पर्यवेक्षण शक्ति पर निर्भर रहता है। अश्क में यह पैनी दृष्टि है।

अश्क जी ने मध्यवर्गीय समाज की नस-नस पहचानने की कोशिश की है। पंजाब के मध्यवर्गीय परिवार से संबंधित कथावस्तु को समाज के दर्पण के रूप में दिया गया है। कथानक चुनाव में भी उनकी एक विशेषता है। जीवन को ऐसा चुनकर प्रस्तुत करना चाहते हैं कि जिनकी ओर किसी भी सहृदय पाठक का हृदय आकर्षित हो जाए।

'अश्क' जी के एकांकियों की कथावस्तु मध्य वर्ग अथवा निम्न वर्ग का समाज की उनका केंद्र बन गया है। प्रेम और विवाह की समस्या इनके एकांकियों में अधिक है। 'अश्क' ने अपनी कथावस्तु के लिए समाज और विशेषतः परिवार को चुना है। परिवार की समस्याओं को सामने रखकर 'अश्क' ने बड़ी ही सफलता के साथ समाज पर व्यंग्य किए हैं। इसके लिए उन्होंने यथार्थवादी व्यंग्यात्मक शैली को अपनाया है। उन्होंने परिवार की समस्याओं का अध्ययन और अनुभव एकांकी नाटकों में किया है। रूढ़िवादी परंपराओं से घायल तथा बुद्धिवादी तर्कों से बोझिल भारतीय समाज इनके एकांकियों की भावभूमि है।

कथावस्तु के चुनाव में ही नाटककार की बुद्धि की परख होती है। नाटककार की भाँति एकांकी नाटकों की कथावस्तु ऐतिहासिक, राष्ट्रीय, सामाजिक, धार्मिक, पौराणिक सब कुछ

हो सकती हैं। अधिकतर जितने एकांकी प्राप्त होते हैं नाटककार पाश्चात्य साहित्य के आधार पर सामाजिक संघर्ष की कथावस्तु ग्रहण करना अधिक पसंद करता है। भैरव प्रसाद गुप्त उनकी इस विशेषता का संकेत करते हुए लिखते हैं - "अश्क सागर के तले में पड़े मोती या आकाश में खिलनेवाले फूलों की ओर हाथ नहीं लपकाते। वे जो जीते हैं, वही उनका सरमाया है। उसी को लिखते हैं।"[3]

कथावस्तु नाटककार की आधारशीला है। ग्रीनवुड़ का कथन है कि "कथावस्तु वह चारा है जिसके द्वारा नाटककार गहराई में डूबकर महत्त्वपूर्ण विषय की बड़ी और चमकती मछली पकड़ता है।"[4]

उपेंद्रनाथ अश्क जी की एकांकी नाटकों का कथानक अपना विशेष महत्त्व रखता है। कथा विन्यास की दृष्टि से 'अश्क' के समस्या एकांकी पर्याप्त सुगठित और प्रभावोत्पादक हैं। 'देवताओं की छाया में' एकांकी नाटक का पूरा कथानक सादिक के दांपत्य जीवन से संबंधित है। इस नाटक का कथानक दो युवतियों की नोंक-झोंक से प्रारंभ होकर परिस्थितियों से त्रस्त सादिक के संघर्षमय दांपत्य जीवन का चित्रण खींचता हुआ समाप्त हो जाती है। नाटककार ने सादिक के करूण अंत द्वारा वर्ग-वैषम्य का जो चित्र खींचा है, वह दर्शक के हृदय को अभिभूत कर लेता है।

'लक्ष्मी का स्वागत' एकांकी में एक ओर पत्नी की मृत्यु और पुत्र की बीमारी से चिंतित रोशन की व्यग्रता का चित्रण प्रस्तुत किया गया है। दूसरी ओर उसके माता-पिता की हृदयहीनता का जो रौशन और उसके बेटे का ध्यान न रख रौशन के विवाह द्वारा लक्ष्मी प्राप्त करने की चेष्टा संलग्न है। दोनों घटनाएँ परस्पर सानुपात होकर एकांकी की कार्यस्थिति में योग देती हैं।

'अधिकार का रक्षक' प्रहसन के रूप में पर्याप्त लोकप्रिय हो गई है। परंतु शिल्पगत त्रुटियाँ इसमें अनेक हैं। नाटक की सभी घटनाएँ सेठ के चरित्र से संबंध हैं। इस प्रकार कथा में कोई विश्रृंखलता नहीं है किंतु सेठ के चरित्र का कोई उतार-चढ़ाव नहीं है जो कौतुहल बनाए रख सके। वह एक समधारा है जो समतल धरती पर मंथर गति से प्रवाहित होती है। इसीलिए कलात्मक सौंदर्य यहाँ कुछ क्षीण दिखाई देती है।

उपर्युक्त सभी एकांकियों में वस्तु तत्त्व को प्रेषणीय बनाने के लिए अश्क ने बड़ी स्वाभाविकता से काम लिया है। वस्तु के विविध भागों पर जिस नियंत्रण की आवश्यकता रहती हे, जिस संतुलन और सामंजस्य की पूर्ति द्वारा एकांकी का विकास सफल रूप में होता है, वे गुण यहाँ विद्यमान हैं।

'चरवाहे' एकांकी का पूरा कथानक रत्नी के जीवन से संबंधित है। नाटक के प्रारंभ में रत्नी और कांत की डकैती का चित्रण हुआ है। यह चित्रण उस समय तक चलता रहता हे जब वृंदावन यह खबर देता है कि रत्नी गोविंद के साथ भाग गई है।

'चुंबक' एकांकी का केंद्र में गौतम है। जिसके काव्य के आकर्षण से कई युवतियाँ उसकी ओर खिंची जाती हैं। 'मैमूना' एकांकी का कथानक आमना को केंद्र बनाकर गतिशील होता है।

इन तीनों एकांकियों का कथाविन्यास एक ही प्रकार का है। इन एकांकी नाटकों का प्रारंभ किसी कौतूहलवर्धल घटना से होता है। जिससे कथा रूपायित होती है। घटनाओं का परिचय चलता ही रहता है कि कुछ नया घटित हो जाता है और नाटक एक चमत्कार के साथ समाप्त हो जाता है।

'चिलमन' सांकेतिक एकांकी नाटक है। हरि अपनी रूग्ण पत्नी किरण की सेवा शुश्रुषा में लगा हुआ है, तभी उसकी प्रेमिका शशि आ जाती है। शशि का प्रेमी और हरि का दोस्त मनोहर, हरि से कहता है कि वह शक्ति को अपना ले या उसे साफ जवाब दे दें। भावों का घात-प्रतिघात चलता रहता है कि किरण की मृत्यु हो जाती है। और नाटक की समाप्ति हरि के निर्णय के साथ होती है। शशि उसकी जिंदगी में नहीं आ सकती है।

'सूखी डाली' एकांकी में दादा मूलराज संयुक्त परिवार के समर्थक हैं। छोटी बहू बेला के आगमन से उनके परिवार में विघटन की समस्या खड़ी हो जाती है। दादा सक्रिय होते हैं और समस्या का मनचाहा समाधान खोज लेते हैं। नाटक की पूरी कथा बेला को केंद्र में मानकर गतिशील होती है। यद्‌पि इस एकांकी में विस्तार कुछ अधिक है, पात्रों की संख्या भी अधिक है। फिर भी नाटककार अपने उद्‌देश्य की अभिव्यक्ति में सफल रहा है।

'चरवाहे' एकांकी संग्रह के 'एकांकी अपेक्षाकृत गंभीर सूक्ष्मताओं का उद्घाटन करने के कारण दर्शनकों को एकांत स्थिरता देते हैं। अपनी बुनावट और कथोपकथों की स्वाभाविकता में अत्यंत सफल होते हुए भी नाटकीय गति में अंशत: शिक्षित हैं क्योंकि इसका क्षेत्र मानस और मस्तिष्क है और उसके प्रकाशन का माध्यक है प्रतीक शैली।

'पापी' एकांकी का संपूर्ण कथा विन्यास शांतिलाल के जीवन से संबंद्धित है। उनकी पत्नी छाया यक्ष्मा से ग्रस्त होकर जीवन की अंतिम घड़ियाँ गिन रही है। छाया की बहन रेखा उसकी सेवा करने के लिए आती है। शांतिलाल रेखा के आकर्षण में बँधकर छाया की उपेक्षा करता है। अंत में दोनों को खो देता है। छाया मर जाती है और रेखा ठुकराकर चली जाती है। नाटक का अंत अत्याधिक प्रभावोत्पादक है।

'मैंमुना' एकांकी की नायिका आमना के चरित्र में बुर्जआ संस्कृति की प्रतिगामी आधुनिक नारी के अंतर्विरोधों का मनोवैज्ञानिक उद्घाटन होता है।

'देवताओं की छाया में' एकांकी में भरी का यह कहना है - ''हम लड़कियाँ हैं। हम अपनी इच्छा से हँस नहीं सकती, बोल नहीं सकती, हिल-डुल नहीं सकती, चाहे जीवन में घुट-घुट कर मर जाँय।''[5]

अश्क के ऐसे सभी नाटकों में ज्ञात-अज्ञात रूप से सामाजिक व्यक्ति की हैसियत से नारी को सामंती और पूँजीवादी बंधनों से मुक्त करने की भावना विद्यमान दिखाई है।

अश्क की सहानुभूति श्रमिक वर्ग के साथ है। यद्यपि उन्होंने मजदूरों के जीवन पर कोई नाटक नहीं लिखा फिर भी उनके नाटकों में यत्र-तत्र श्रम का शोषण करनेवाली पूँजीवादी मनोवृत्ति का पर्दाफाश किया गया है।

'देवताओं की छाया में' एकांकी में शोषण-ग्रस्त मजदूरों के जीवन की छोटी-सी झांकी उन्होंने प्रस्तुत की है। वे कहते हैं - ''काकू के ऐसी ही एक नई आबादी के पास दो अढ़ाई सौ कच्चे घरों का एक गाँव है..... गाँव संपन्न हो रहा है।''[6]

निष्कर्ष -

कथावस्तु का प्रारंभ, मध्य और अंत चरित्रों के स्वाभाविक कार्य व्यापार के क्रमिक रूप से विकसित होता हुआ नाटक के उद्देश्य को अंत में प्रतिपलित करता है। 'अश्क' के नाटकों में वस्तुविन्यास का यही विकासक्रम है।

'अश्क' के समस्या नाटकों के कथानक पर्याप्त, सुगठित हैं, कहीं भी विस्तार दोष नहीं है। प्रासंगिक कथाओं की सृष्टि अश्क ने कम की है, उनका मूल उद्देश्य आधिकारिक कथा विकसित करना है। उनके बड़े एकांकी नाटकों में जहाँ समस्याओं की विविधता है, वहाँ भी उनके कथानक उलझते नहीं हैं। नाटककार के विस्तृत अनुभव और सुलझे हुए दृष्टिकोण के आधार पर एकांकी नाटकों का निर्माण हुआ है।

5.2 पात्र एवं चरित्र चित्रण -

साहित्य के विविध रूप - उपन्यास, कहानी, कविता, नाटक, एकांकी में जीवन का प्रतिबिंब या उसके रहस्यों का उद्घाटन विविध मानव व्यक्तिवों के चरित्र द्वारा होता है। साहित्य चाहे जिस तरह की हो, जिस कोटि की हो, उसका उद्देश्य मानव है। मानव जीवन के विविध रूपों का प्रस्तुतीकरण ही साहित्य है। नाटक में सजीवता और स्वाभाविकता लाने के एक मात्र माध्यम उसके चरित्र हैं। पात्र नाटक का मूलतत्त्व है जिसके क्रिया कलापों से नाटक का क्रिया व्यापार गतिशील होता है। नाटककार की सफलता ऐसे पात्रों के निर्माण है जो दर्शक के मानस पटल पर शाश्वत प्रभाव डाल सकें। चरित्र चित्रण कथानक निर्माण से उच्चतर कार्य हैं। कथानक निर्माण को हम अविष्कार कहते हैं, चरित्र के निर्माण को सृष्टि कहकर गौरवान्वित करते हैं।

आज साहित्य में व्यक्ति की प्रतिष्ठा चाहे वह सामाजिक हो या एकांगी वैयक्तिक का साधन चरित्र-चित्रण है। इसीलिए नाटक या उपन्यास के उद्दिष्ट प्रभाव की प्राप्ति (नाट्यशास्त्र की दृष्टि में रस-निष्पत्ति या फलागम) के लिए चरित्र-चित्रण यहाँ एक साधन है, वहाँ सजीवता और स्वाभाविकता की प्राप्ति के लिए अपने में एक साध्य भी है।

नाट्य-रचना के विकास में चरित्र-चित्रण का महत्त्व इस युग के नाटकों की विशेषता है। अधिकांश देशों के प्रारंभिक नाटकों में एक सुनिश्चित नियम के अनुसार एक विशेष वर्ग के पात्रों

को उपस्थित करना ही चरित्र-चित्रण का यांत्रिक रूप था। इसलिए उस समय के नाटकों में लगभग नायक, प्रतिनायक मिलते हैं और उनके गुणधर्म मिलते हैं।

प्राचीन काल के नाटकों में पात्रों का चुनाव सामंतीय वर्ग से किया जाता था। नायक के गुणों का प्रदर्शन करना नाटक का मूल उद्देश्य होता था। नेता सर्वगुण संपन्न होना आवश्यक था। 'आज नाटक द्वारा मानव से, उसके हृदय तथा आत्मा से परिचित कराना ही लक्ष्य है। पात्रों के कुशल चरित्रांकन के लिए मानव प्रकृति और मनोविज्ञान का सूक्ष्म अध्ययन होना उपेक्षित है। नाटककार यदि अपने अनुभव क्षेत्र से पात्रों का चुनाव करेगा तो वह अपनी रचना को अधिक सहज और सजीव बना सकेगा।

'अश्क' प्रारंभ से ही यथार्थ के प्रति सजग है। वे समय के परिवर्तन को पहचानते हैं। वे समस्याओं का विश्लेषण पात्रों के सहज विकास के माध्यम से करते हैं। वे न तो समस्याओं को पात्रों पर आरोपित करते हैं और न पात्रों को विचारों का यंत्र बनाते हैं। बल्कि विचार वस्तु और पात्र एक दूसरे से स्वाभाविक रूप से संश्लिष्ट हैं। अश्क ने मध्यवर्गीय जीवन के विविध रूपों को निकट से देखा है। समाचार पत्र के रिपोर्टर के रूप में जीवन-संघर्ष आरंभ करके उन्होंने अध्यापक, अनुवादक, संपादक, वक्ता, विज्ञापन विशेषज्ञ, वकील, रेडियो आटिस्ट अभिनेता और सिनारिष्ट की हैसियत से तरह-तरह के अनुभव प्राप्त किए हैं और अनेक घटनाएँ उनके मस्तिष्क में सूरक्षित पड़ी हैं। इन्हीं अनुभवों के आधार पर वे पात्रों की सृष्टि करते । जब वे अपने प्रिय नाटककारों को पढ़ते समय उन्हें नाटक लिखने की प्रेरणा होती है तो कई पात्र, घटनाएँ और दृश्य उनके आधारभूत विचारों में से किसी एक में फिर हो जाती हैं। और नाटक तैयार हो जाता है। 'अश्क' पहले पहल आधारभूत विचार खोजते हैं। और उसी के आधार पर पात्र निर्माण करते हैं। 'अश्क' कहते हैं - ''कोई भी पात्र चाहे वह कितना भी मनोरंजन क्यों न हो शायद ही कभी अपने यथार्थ रूप में नाटक का अंग बनता है। आधारभूत विचार की आवश्यकता के अनुसार उस पर रंग चढ़ जाता है।''[7]

पात्र और विचार दोनों ही लेखक की अनुभूति के अंग हैं। दोनों के समन्वय से चित्रण में यथार्थता तथा सजीवता आती है। विचारों के अभाव में चरित्र निर्जीव और निरर्थक बन जाते हैं। साहित्य की चरित्र सृष्टि तथा जीवन में अनुभूत पात्रों के स्वरूप में अंतर होना स्वाभाविक

है। सृजन के क्षणों में पात्र अपने प्रकृत स्वरूप से मुक्त होकर लेखक की मनस्थिति के अनुरूप ढल जाते हैं। अश्क ने इसका स्पष्टीकरण निम्नलिखित शब्दों में किया है - ''कई बार किसी पात्र के कृत्य का कारण ढूँढ़ने और पाने के प्रयास में उसका प्रकट रूप ही बदल जाता है। और वह अपने आंतरिक रूप में अथवा उस रूप में कि जिसमें मैं उसे देखता हूँ, नाटक का पात्र बन जाता है।''[8]

अश्क ने बहुत ही कम समय के लिए नाटक में आनेवाले पात्रों की चारित्रिक खूबियों को संवादों या संकेतों से उभारा है। जैसे उनके सफल प्रहसन 'जोंक' एकांकी में एक पंजाबी, ए हिंदुस्थानी और एक मारवाड़ी पड़ौसी कुछ क्षण के लिए ही नाटक में उपस्थित होते हैं। और उनकी एक दो बातों से ही उनकी चारित्रिक विशेषताओं को लेखक ने परिचय दिया है -

मारवाड़ी - ''अबे शाला, मैं-मैं क्या, नीचे तो उतर! मार-मार कर भूस बना देंगे!

हिंदुस्थानी - आजकल की बेकारी ने नौजवानों को चोर और डाकू बन दिया है।

पंजाबी - ओए, उतर ओए! ओथेई की टंग्गेया होयाएँ। टूटते वेक्खों जिवे नाहढू खाँ दा साला होंदा ए!''[9]

इसी प्रकार 'पर्दा उठाओ पर्दा गिराओ' में चुन्नीलाल पीड़ितजी, और रामकिशन में अनेक छोटे गौण पात्र हैं।

अश्क ने अनुपस्थित पात्रों को अन्य पात्रों के संवादों द्वारा केवल परिचित कराने की कोशिश नहीं की है। वरन् उन्हें साकारता प्रदान करने की भी कोशिश की है। इसके सबसे सफल उदाहरण 'चरवाहे' और 'चिलमन' एकांकी में है।

'चरवाहे' एकांकी की प्रधान पात्र रत्नी को प्रेरणा देनेवाला चरवाहे गोविंद का स्वच्छंद और उद्दान यौवन से पूर्ण चरित्र रंगमंच पर नहीं आता, किंतु चरवाहों का एक गीत और दूसरे का द्वंद्व चरवाहे के जीवन और उसे प्रतीक पात्र गोविंद अनुपस्थित होते हुए भी साकार कर देता है।

'चिलमन' एकांकी में शशि भी रंगमंच पर नहीं आती है। अपनी अनुपस्थिति में भी नाटक में महत्त्व प्राप्त कर लेती है। अमूर्त पात्रों को संवादों और संकेतों से मूर्त रूप में चरित्रांकित करने की यह विशेषता अश्क की अपनी नितांत मौलिक विशिष्टता है।

'अश्क' के एकांकियों के पात्र हमारे जीवन का दर्पण बनकर प्रस्तुत होते हैं और उनमें हमें अपनी जिंदगी की तस्वीरें दिखाई पड़ती हैं। वे चरित्रांकन को स्वभाविक बनाए रखने के लिए पात्रानुकूल भाषा और बातचीत का काफी ख्याल रखते हैं। इसलिए उनके संवाद विचार वस्तु के केवल यांत्रिक वाहन नहीं बनते हैं। बल्कि पात्र की स्वाभाविक वाणी और विचार बनकर उसके चरित्र पर प्रकाश डालते हैं। और विचार-वस्तू को भी गति प्रदान करते हैं। संवादों द्वारा चरित्र के गुण दोषों का संकेत उन्होंने चातुरी से किया है।

'अश्क' के एकांकी नाटकों के चरित्रों का विकास इतने स्वभाविक रूप में होता है कि पात्र जाने पहचाने से लगते हैं। उनके जीवन में हमें अपना जीवन दृष्टिगोचर होता है। और उनके गुण दोष हमें अपने गुण-दोष जान पड़ते हैं। पात्रों की भाषा और बातचीत उनके स्तर के अनुकूल ही रही है। जिससे पात्रों का चरित्र स्वाभाविक बना रहता है। और वस्तु को भी गति मिलती है। पात्रानुकूल संवादों के अभाव में चरित्र विचारों के वाहक-बनकर रह जाते हैं। 'अश्क' के पात्र अपने जीवन के अत्यंत निकट हैं।

'अश्क' ने अपने नाटकीय पात्रों को इतने सहज रूप में प्रस्तुत किया है कि पात्रों के वर्गीय संस्कार निखरकर सामने आ जाते हैं।

'सूखी डाली' एकांकी में पात्रों के चारित्रित विकास में मध्यवर्गीय संसार मुखर हो उठे हैं। दादा मूलराज जानते हैं कि संयुक्त परिवार को वे अधिक दिन नहीं चला सकते हैं। उन्हें चिंता है कि परिवार टूटने नहीं देते हैं। चाहे घुटन और निराशा में क्यों न जीना पड़े।

'अधिकार का रक्षक' और 'चुंबक' एकांकी में नेता संपादक और कवि के चरित्र जीवन की विकृतियों का चित्रण करने के साथ-साथ वर्गीय प्रभावों से युक्त वर्तमान जीवन की तस्वीर ही खींच देते हैं।

'अश्क' ने वर्तमान मध्यवर्गीय जीवन के विविध व्यक्तियों के चरित्रांकन अपने सामाजिक एकांकी नाटकों में किया है। डाक्टर, पत्रकार, कवि, क्लर्क, अभिनेता आदि विविध पुरुष-चरित्र उनके नाटकों में यथार्थ रूप उतरे हैं। जहाँ अश्क ने पारिवारिक समस्याओं से संबंधित विविध पुरुष-पात्रों को पिता, पुत्र, पति और भाई के रूप चित्रित किया है। वहाँ भी इन पात्रों के

वर्गीय संसार निखरकर सामने आए हैं। इसके अतिरिक्त 'आपस में समझौता' में डाक्टरों के, 'अधिकार का रक्षक' में नेता और संपादक के, 'चुंबक' में कवियों के, 'मस्केबाजों का स्वर्ग' में नए फिल्मी अभिनेता, निर्देशक, लेखक गीतकार, संगीत-निर्देशक आदि के चरित्र जहाँ वर्तमान जीवन को सही तस्वीर भी उद्घाटन करते हैं, वहाँ वर्तमान जीवन को सही तस्वीर भी खींचते हैं। इन पात्रों का चुनाव और यथार्थ चारित्रांकन समाज की वर्तमान समस्याओं के प्रति लेखक के जागरूक यथार्थवादी दृष्टिकोण का परिचायक है।

'अश्क' के समस्या एकांकी नाटकों का मूलाधार नारी है। उनके अधिकांश एकांकी नाटक नायिका प्रधान हैं। इनके सामाजिक एकांकी नाटकों में भी इसी विचारधारा के सूत्र मिलते हैं। ''ऐसे भी नारी पात्र हैं जो पुरानी पारिवारिक रूढ़ियों और संस्कारों में ग्रस्त हैं। ऐसे भी हैं जो उन रूढ़ियों से निकलने को छटपटा रहे हैं, ऐसे भी हैं जो इस प्रयास में अपना संतुलन खो बैठे हैं। और उच्छृंखलता ही को स्वतंत्रता मान बैठे हैं। और बाहर बनाने की फिक्र में घर ही बिगाड़ रहे हैं। ऐसे भी हैं जो पुराने और नए में सामंजस्य स्थापित कर घर को सूखी बना रहे हैं। ऐसे भी हैं जो अभिज्यात्य वर्ग के खोखले जीवन की कुंठाओं के शिकार हैं और ऐसे भी जो भविष्य की स्वच्छंद पर उत्तरदायित्व को निभानेवाली नारी की झलक देते हैं - ऐसी नारी की, जो ठीक अर्थों में पुरुष की सहचारी, मंत्रिणी और संगिनी होगी।''[10] उनके मन में आज की नारी के बंधनों के प्रति क्रोध है, दुःख और कुंठाओं के प्रति संवेदना, सीमाओं के प्रति सहानुभूति, कुप्रवृत्तियों के प्रति व्यंग्य तथा आक्रोश है और आदर्शों के प्रति श्रद्धा और महत्त्वाकांक्षाओं के प्रति प्रशंसा है। गोपाल कृष्ण कौल कहते हैं - ''नारी न तो स्वर्ग लोक की देवी है और न पुरुष की दासी या भोग्या है। वह उसकी जीवन संगिनी है। नारी के इसी स्वरूप को स्पष्ट करने के लिए उन्होंने 'विवाह और प्रेम की समस्या के सामाजिक पृष्ठभूमि पर विविध संस्कारवाली नारियों के चित्र खींचे हैं। सामंती संस्कारों से लेकर आज का जागरूक दृष्टिकोण रखनेवाले तरह-तरह के नारी के नारी पात्र उनके नाटकों में बिखरे पड़े हैं।''[11]

'अश्क' के एकांकी नाटकों में पत्नी के अनेक रूप चित्रित हैं। भरी, श्रीमती सेठ, छाया जैसी संस्कारों में आबद्ध नारियाँ हैं। जिनकी मुक्ति की कोई आशा ही नहीं है।

'सूखी डाली' एकांकी में बेला जैसी नारियाँ भी हैं जो पुरानेपन से समझौता न कर पाने के कारण परिवार की स्वाभाविक गति में अवरोध उत्पन्न कर देती है। तथा मझली भाभी जैसी नारी भी हैं जो टोले-पड़ोस की कलंक कहानियाँ सुनने में पर्याप्त रुचि रखती हैं। ये समस्त नारियों के विभिन्न रूप प्रस्तुत करने के साथ-ही-साथ विभिन्न पारिवारिक समस्याओं पर भी प्रकाश डालते हैं।

'अश्क' जी के एकांकी नाटक में प्रेमिकाओं के विविध रूप हैं। रत्नी, सरिता, गोपा, आमना, रमा, निशा, कामदा प्रेम के कई रूप प्रस्तुत करती हैं। रत्नी और सरिता पंख फड़काती चिड़ियाँ के समान उड़ने आतुर हैं। जिसके बारे में अश्क ने अपनी एक प्रसिद्ध कविता में लिखा है -

"चल पंख तुम्हारे आतुर
उड़ने को आकाशों की गहराई में
कल कंठ तुम्हारा बेकल
गाने को जीवन के मादक गाने
अनजाने मंडल में जाने को
हृदय तुम्हारा विह्वल।"[12]

रत्नी उन्मुक्तता और साहस से प्रेम करती है। कुछ दिनों तक वह भावनाओं को छिपकर गोविंद से मिलती रहती है। एक दिन मौका पाकर गोविंद के साथ भाग जाती है। सरिता के प्यार में आवेग और विकहीनता है। वह ऐसे पुरुष से प्यार करती है जिसने उसे देखा नहीं है। पर अबाध नदी के समान कल्पना में बहती हुई उसके आकर्षण में खिंची चली जा रही है। 'गोपा' भी भावना के वश होकर गौतम की ओर आकर्षित होती है, पर संयोगवश उसके जाल से बच जाती है। 'आमना' अस्थिर और अतृप्त नारी है। उसके प्रेम में सात्विकता नहीं है, उद्दाम वासना का आवेग है। रमा, निशा और कामदा ऐसी आधुनिकता की युवतियाँ हैं जो प्रेम की सूख की तुला पर तौलती है। 'कामदा' तो माता-पिता की राय मानकर जीवन से समझौता कर लेती हैं। रमा और निशा अंत तक भटकती रहती हैं।

इस प्रकार 'अश्क' के समस्या एकांकी नाटकों में नारी जीवन की विभिन्न पहलू प्रकाशित हुए हैं। ये सभी चरित्र अपनी परिस्थितियों में स्वाभाविक रूप से विकसित होते हैं। जिंदगी के व्यापक अनुभव द्वारा 'अश्क' ने उन्हें इतना यथार्थ बना दिया है कि वे जाने पहचाने से लगते हैं। उनका प्रत्येक कार्य हमारे जीवन का एक चित्र खींच देता है। 'अश्क' मध्य वर्ग के दांपत्य जीवन को गहराई से देख चुके हैं। पढ़ी लिखी कुमारियों के विवाह की समस्या का उन्होंने संवेदनशीलता और सांकेतिकता से विवेचन किया है।

नारी पात्रों के चरित्र-चित्रण में अश्क का दृष्टिकोण प्रत्येक स्थान पर सामाजिक यथार्थवादी है। अनेक दूसरे प्रगतिशील लेखकों की तरह पूँजीवादी रोमांस और यौन वेदना का प्रभाव नहीं है। अश्क ने नारी पात्रों के साथ खिलवाड़ नहीं किया है और न पाठकों की सस्ता अतृप्त कामवासना के स्वाद के लिए उन्हें चटनी के रूप में पेश किया है। उनका दृष्टिकोण इस विषय में एकदम स्वस्थ, नैतिक और सामाजिक है।

नारियों के विषय में उनका दृष्टिकोण पूर्णतया यथार्थवादी है। प्रकृतिवादी नग्नता तथा यौनवेदना का प्रभाव उनपर नहीं है। उनका दृष्टिकोण पूर्ण स्वस्थ और नैतिक है। पुरुष की उच्छृंखलता का उदाहरण प्रस्तुतकर नारी को मुक्त संभोग की प्रेरणा देना उन्हें बिल्कुल पसंद नहीं है। नारी की नग्न यौन संबंधों का प्रदर्शन करना 'अश्क' को स्वीकार्य नहीं है। वे नारी को नारी रूप में देखना चाहते हैं। नारी को वासना की प्रतिमूर्ति बनाकर उसके साथ खिलवाड़ करना 'अश्क' का स्वीकार नहीं है।

निष्कर्ष -

'अश्क' जी ने एकांकी नाटकों में रंगमंच पर न आनेवाले पात्रों का अन्य पात्रों के संवादों द्वारा परिचित कराने की कोशिश की है। पारिवारिक समस्याओं से संबंधित विविध पुरुष पात्रों को पिता, पुत्र, पति और भाई के रूप में चित्रित किया है।

'अश्क' जी ने नारी को विविध रूपों में प्रस्तुत किया है। उनके बंधनों के प्रति उनके मन में क्रोध है, दुखों और कुण्ठाओं के प्रति समवेदना है। सीमाओं के प्रति सहानुभूति है। कुप्रवृत्तियों के प्रति व्यंग्य तथा आक्रोश, आदर्शों के प्रति श्रद्धा और महत्त्वाकांक्षों के प्रति प्रशंसा

है। वे नारी को न दासी देखना चाहते हैं, न खिलौना, न देवी। वे उसे पुरुष के साथ पग-से-पग और कंधे से कंधा मिलाकर चलती हुई, उसकी संगिनी और उसकी मैत्रिणी देखने के अभिलाषी हैं। इस प्रकार अश्क जी ने नारी जीवन के विभिन्न रूपों को उन्होंने सहानुभूति से देखा है और उसका स्वस्थ और यथार्थ चित्रण किया है। अश्क के प्रत्येक पात्र उसके अहं का प्रतिनिधित्व करता है तथा अश्क के जीवन जीतनी झलक इनके एकांकियों में मिलती है वह अन्य किसी एकांकीकार के साहित्य में उसी अनुपात में नहीं मिलती।

5.3 संवाद और भाषा -

'अश्क' जी की एकांकी नाटकों का संवाद सीधे, सरल, प्रभावी, पत्रानुकूल और प्रसंगानुकूल है। कहीं-कहीं संवाद छोटे हैं, तो कहीं-कहीं काफी लंबे हैं।

साहित्य के अन्य विधाओं की अपेक्षा नाटक में संवादों का अधिक महत्त्व है। नाट्य कला का मूल संवाद है। संवाद के तीन प्रयोजन हैं - वह वस्तु की प्रगति, चरित्र के विकास, भावों के स्पष्टीकरण एवं उनको गंभीर बनाने में सहायक होता है। डॉ. रामकुमार वर्मा ने एकांकी के संवादों की विशेषताओं का उल्लेख करते हुए लिखा है कि - ''एकांकी का संवाद चरित्र की चारित्रिकता को प्रकट करता है, एकांकी के कथासूत्र को विकसित करता है और पात्रों के भावों को प्रकट करता है।''[13] संवाद का कार्य नाटक के कार्य-व्यापार को गतिशील करना तथा पात्रों की चारित्रिक विशेषताओं को स्पष्ट करना है। संवाद की विशेषता यह है कि वह इसमें कोई-न-कोई प्रयोजन सिद्‌ध करें। इस दृष्टि से अलंकृत शैली में लिखित संवादों का कोई मूल्य नहीं है।

संवाद नाटक के विभिन्न रासायनिक द्रव्यों को एक सूत्र में मिलाकर नाट्य शरीर को सजीवता प्रदान करता है और उसे प्रभावशाली बनाता है। अश्क ने संवादों की स्वाभाविकता का बहुत ध्यान रखा है। उन्होंने प्रसाद की तरह प्रत्येक पात्र के मुँह से एक प्रकार की एवं एक तरह की भाषा का प्रयोग नहीं किया है। अपितु पात्रों के अनुकूल ही संवादों को इस प्रकार गढ़ा है कि उनकी भाषा लेखक द्‌वारा आरोपित कृत्रिम भाषा नहीं जान पड़ती है। अश्क के एकांकी नाटकों की भाषा चलती हुई मुँहावरेदार, टकसाली, पात्र और समय के सर्वथा अनुकूल रहती है।

'जोंक' एकांकी नाटक में तीसरे दृश्य में दो पात्रों का पंजाबी और मारवाड़ी होने का परिचय उनके संवादों की भाषा से ही लगता है।

''पंजाबी - की गल्ल, की गल्ल ए, किद्धर चोरी हुई है किद्धर !

मारवाड़ी - कोई छे शाब, कोई छे !''[14]

भाषा के भेद से ही यहाँ पर पंजाबी और मारवाड़ी होने का परिचय केवल नहीं होता है बल्कि संवादों में प्रकट उनकी भावनाओं के द्वारा जातिगत स्वभावों का भी परिचय मिलता है। चोर के पकड़े जाने पर पंजाबी के संवाद में क्रोध है वह सब से अधिक गाली देता है। मारवाड़ी शिकायत के स्वर में गाली देता है। और मारने की केवल धमकी देता है। आजकल बेकारी ने नौजवानों को चोर और डाकू बना दिया है।

संक्षिप्तता संवाद की दूसरी विशेषता है। संक्षिप्त संवाद से नाटक की गति में क्षिप्रा आती है। यह संक्षिप्तता तभी हो सकती है जब उसके प्रत्येक शब्द का मूल्य हो। प्रत्येक शब्द और वाक्य का प्रयोज्य और सार्थक होना आवश्यक है। संवाद स्वाभाविक होना आवश्यक है। ऐसे संवादों को अभीनेता सहज और प्रभावशाली ढंग से बोल सकते हैं तथा दर्शक उसे सरलता से ग्रहण कर लेते हैं। ऐसे संवाद यदि लंबे भी हो तो भी नाटक के प्रभाव में कोई व्याघात नहीं पहुँच सकती है।

''माँ - बहू की बीमारी का पूछते होंगे।

पिता - उन्हें शक था, पर मैंने कह दिया, जिगर का बुकार था, बिगड़ गया।

माँ - बच्चे को पूछते होंगे।''[15]

अश्क जी ने संवादों की स्वाभाविकता पर पूरा-पूरा ध्यान रखा है। उनके पात्रों की भाषा कृत्रिम नहीं जान पड़ती है। उनमें समय की सापेक्षता है। उनके संवादों में पात्रों के स्थान और भावनाओं का पता लग जाता है। अश्क के संवाद इसलिए असाधारण हैं कि उनमें नदी की धारा भाँति, परिस्थितियों के ढलाव के अनुकूल उत्तर-प्रत्युत्तर चलते हैं। दरबारी ढंग का वाहवाही संवाद नहीं है। उनकी नायिकाएँ शास्त्रार्थी पंडितों की भाँति सूत्र गुंफन करती हैं। वैसे तो 'अश्क' ने सर्वत्र पात्रानुकूल भाषा का प्रयोग किया है।

'कइसा साब कइसा आया' एकांकी में बंबई के अभिज्यात परिवारों में काम करनेवाली आया का चरित्र उसकी बंबइया हिंदुस्तानी के संवाद से प्रकट होता है। साथ में संवादों की भाषाओं से उनके चरित्र की विशेषताएँ उभरकर सामने आती हैं।

''साहब - बड़ी अच्छी साड़ी है, कहाँ से ली है ?

आया - वायल की है, यह तो प्रिण्ट है।

साहब - अच्छा प्रिण्ट है !

आया - अधर धोबी तलाओं में अइसा साड़ी मिलता है साहब ! कइसा लगता है हमको साहब !

साहब - अच्छी लगती है, पर तुम्हें सफेद साड़ी पहननी चाहिए।

आया - क्यों साहब ?

साहब - काले रंग पर सफेद साड़ी अच्छी लगती है।

आया - हम सफेद साड़ी भी पेनता था साहब, पन कई आदमी हमारे पीछू लग जाता था। हम छोड़ दिया सफेद साड़ी पेनना।''[16]

इस प्रकार आया और साहब के संवाद में बंबइया हिंदुस्तानी भाषा का परिचय मिलता है।

'अश्क' के एकांकी के प्रारंभिक भाग में संवादों द्वारा घटनाओं और चरित्रों के प्रति एक जिज्ञासा और कौतुहल पैदा कर दिया जाता है। 'जोंक' एकांकी के प्रारंभ में भोलानाथ का यह कहना है - ''यह फिर आ गया आनंद ! तुम मेरी शहायता करना भगवान के लिए।''[17] रत्नी के इस संवाद द्वारा एक सहासी, जिंदादिल व्यक्ति का चित्र साकार होकर सामने आ जाता है। सादिक सरल हँसमुख व्यक्तित्व खैरन के निम्नलिखित संवाद में प्रतिबिंबित हो गया है - ''बेगम या तो सैर को निकल जाती या फिर सिनेमा देखने जाती और अगर कभी घर भभ होती तो सदा मुँह फुलाये बैठे रहती, इस पर भी सादिक सदा हँसा करते। अपने सलूक में जरा फर्क न आने देते। निगोड़ा जुकाम भी बेगम को हो जाता तो डाक्टरों के पीछे मारे-मारे फिरते।''[18]

इसी तरह भरी के संवाद द्वारा सादिक चरित्र रूपायित हो उठा है - ''कल जब टकुआ लेकर चढ़ आया तो मैंने कहा, मुझे चाहता है तो चार पैसे कमाकर ला। ....सावी दुनिया मजूरी करती है, तू क्यों नहीं करता। ....बाप मर गया और सिखाया किसी ने कुछ है नहीं।''[19]

'अश्क' जी के संवादों की सबसे महत्त्वपूर्ण विशेषता है उनमें हास्य और व्यंग्य का अद्‌भुत सम्मिश्रण है। समस्याओं का उद्‌घाटन करने के लिए ऐसे संवादों का प्रयोग करते हैं। 'जोंक', 'तौलिये', 'मैमूना', 'मस्केबाजों का स्वर्ग' एकांकी नाटक में हास्य व्यंग्य भरे संवाद मिलते हैं।

'तौलिए' एकांकी में घर के प्रत्येक व्यक्ति और प्रत्येक काम के लिए उसने अलग-अलग तौलिया रखा है। मधु का पति वसंत उसकी इस सनक का विरोध करते हुए कहता है - "स्वच्छंदता बुरी नहीं, न सुरूचि बुरी है, पर तुम तो हर चीज को सनक की हद तक पहुँचा देती हो और सनक से मुझे चिढ़ है।"[20] सनक के कारण एक ओर मधु पति के व्यवहार से कुढ़-कुढ़कर अपने स्वास्थ्य का सत्यानाश करती है। दूसरी ओर 'अधिकार का रक्षक' एकांकी में मि. सेठ का यह संवाद -

"मि. सेठ - हेलो ! हेलो ! हाँ, हाँ, मैं बोल रहा हूँ। घनश्याम दास। आप.... अच्छा, अच्छा, अच्छा, रलारामजी मंत्री हरिजन सभा। नमस्त नमस्ते। सुनाइए महाराज कल के जल्से की कैसी रही ? अच्छा, अच्छा ! आपके भाषण के बाद हवा हो पलट गई है। हरिजन मेरे पक्ष में प्रचार करने तैयार हो गए ? हिं-हिं....हिं-हिं ठीक ठीक ! आपने खूब कहां, खूब कहा आपने ! हिं हिं.... दर असल मैंने अपना सारा जीवन पीड़ितों, पद-दलितों और गिरे हुओं को ऊपर उठाने में लगा दिया है।"[21]

यहाँ सेठ ने नेता जीवन का परिचय दिया है। 'अश्क' की संवाद योजना में स्वाभाविकता का पूर्ण निर्वाह हुआ है। उन्होंने स्वगत का प्रयोग भी किया है, पर वही जहाँ वे स्वाभाविक और नाटक की गति के अनुकूल है। 'अश्क' ने सिद्‌धांत की परवाह न कर व्यावहारिकता को महत्त्व दिया है।

'अश्क' के एकांकी नाटकों में संवादों का प्रयोग अनुपस्थित घटनाओं एवं अनुपस्थित पात्रों को साकार करने के लिए भी किया है। ये संवाद कथा की पृष्ठभूमि का परिचय देने के साथ नाटक की गति में भी सहायक होते हैं।

गोविंद, शशि, साजिद, सादिक आदि अश्क के एकांकी नाटकों के ऐसे पात्र हैं जो रंगमंच पर नहीं आते किंतु अन्य पात्रों के संवादों द्वारा नाटककार ने उन्हें सबल चरित्र बना दिया है। मरने से पहले गोविंद के हाथ पर अपना हाथ रखकर साहंसी ने कहा था - ''जिंदगी का मेला ही उठ गया दोस्त, नहीं तू मेरे साथियों में होता।''[22] पति के प्रति घृणा की भावना का निर्माण होता है।

'अश्क' जी के एकांकी नाटकों में उद्‌भुत व्यंजक मिलती है। क्रिया व्यापार को निश्चित गति देने के साथ वे संवादों द्वारा वातावरण और मन संघर्ष का चित्र भी खींच देते हैं। निर्देशक रंगमंच पर दृश्यों का आयोजन करके वातावरण को प्रभावोत्पादक बना लेता है और संवादों द्वारा वातावरण का चित्र प्रस्तुत किया जाता है।

'चरवाहे' एकांकी में रत्नी के संवादों से प्रकृति के उन्मुक्त वातावरण का भी चित्र खिंचता है और उसके मन के प्रति क्रिया भी व्यक्त हो जाती है। रत्नी के संवाद इस प्रकार हैं - ''चरवाहे गा रहे हैं - अमर, आजाद, रसभरा गीत! जी चाहता है, सब बंधन तोड़ दूँ, इस रोज-रोज की गुलामी से छुटकारा पा लूँ, सब कुछ देकर आजादी ले लूँ - गाती फिरूँ, ढेर डंगर चरती फिरूँ और दोनों बाहें फैलाकर जिंदगी को अपने अलिंगन में ले लूँ।''[23] रत्नी के संवाद में उसका अंतर्द्वंद्व प्रतिबिंबित हो गया है।

'देवताओं की छाया में' एकांकी नाटक में भरी के संवादों द्वारा उसकी परिस्थितियों और मन संघर्ष का चित्र खींच दिया है। ''मरजान पर वह तो तुम्हें मारता है। भरी-मारता तो है, पर मैं मार खा लेती हूँ।''[24] इस संवाद में 'मारता है पर मैं मार खा लेती हूँ' में तो 'अश्क' ने भरी की आत्मा उड़ेल दी है। सादिक से जो-जो प्यार उसे मिलता है, उसके लिए वह कटुता के समस्त विष को पी सकती है। पुन: वह मरजाना से कहती है कि उसी की खातिर सादिक मजूरी करने चला गया है। इस प्रकार यह निश्चित हो जाता है कि दोनों एक दूसरे को दिल से प्यार करते हैं। दोष सादिक का नहीं, उन परिस्थितियों का है जिसमें वह उलझ गया है और जिस पर उसका कोई बस नहीं है। 'देवताओं की छाया में' एकांकी में पंजाबी, मुसलमान, देहाती जीवन का प्रयोग किया है। उनकी भाषा में अश्क ने उचित ही उर्दू और पंजाबी स्लैंग और शब्दों का प्रयोग किया है।

निष्कर्ष -

'अश्क' जी के एकांकी नाटकों का संवाद, सहज, सरल, पात्र और स्थिति के अनुकूल तथा नाटक की गति प्रदान करनेवाले हैं। कहीं उनकी प्रतीकात्मकता और कहीं उनका हास्य व्यंग्य मोह लेता है। अश्क के एकांकी नाटकों में मनोविज्ञान का भी संवादों से मनोविश्लेषण किया है। इसलिए एकांकी नाटक के संवाद सुंदर, संघटित, स्वाभाविक और प्रवाहपूर्ण बन गया है। ''नाटककार अश्क के हाथ में संवाद ऐसे औजार हैं, जिनसे वे न केवल पात्रों को इच्छानुकूल गढ़ते हैं, वरन नाटक की इसामर को बड़ी सफाई से उठाते और शिखर तक पहुँचाते हैं।''[25]

5.4 *अभिनेयता* -

अभिनय नाटक का प्राण होता है। रंगमंच की उपेक्षा करके नाटक लिखना असंभव है। जो नाटककार रंगमंच को ध्यान में न रखकर नाटक लिखने का प्रयास करता है उनके नाटक में तृटियाँ आती हैं। व्यावसायिक रंगमंच के लिए जो नायक लिखे जाते हैं वे काव्य की दृष्टि से अधूरे लगते हैं।

नाटक की साहित्यिक उत्कृष्ट तथा अभिनयेता का कलात्मक सनन्वय अश्क ने अपने एकांकी नाटकों में किया है। अभिनय के द्वारा ही श्रोता चारित्रिक विशेषताओं और भावों को गहराई से समज जाता है। नाटक पठन करने से हम पात्रों के साथ इतनी तादात्म्यता अनुभव नहीं करते जितने अभिनय द्वारा कर सकते हैं।

'अश्क' के बारे में जगदीशचंद्र गुप्त के विचार दृष्टव्य हैं - ''वे नाटक लिखते नहीं, नाटक पर काम करते हैं एक मजदूर की तरह, उसकी एक-एक पंक्ति पर, एकक शब्द पर, एक-एक अक्षर पर, रात-दिन, दिन और रात, अच्छे रहे तो बीमार रहे तो, रोग अपना काम करता है. अश्क अपना, रोग एक दिन का वे तो कोई परवाह करें, रोज-रोज के रोग की परवाह कोई कर भी तो कहाँ तक ? और वह भी अश्क जैसे आदमी, जिनके लिए जिंदगी का नाम ही काम है, काम नहीं तो जिंदगी क्या।''[26]

नाटक लिखने के साथ-साथ स्वयं रंगमंच में भी क्रियात्मक दिलचस्पी लेने का यह फल है कि आज 'अश्क' के एकांकी उत्तर से लेकर दक्षिण भारत तक खेले जा रहे हैं।

निर्देशक, अभिनेताओं और लेखक के सहयोग में 'अश्क' का पूरा विश्वास है। उनका ख्याल है कि रंगमंच की जरूरतों को जाननेवाला लेखक जब नाटक में संशोधन या परिवर्धन करेगा तो निश्चय ही यह काम वह निर्देशक या किसी अभिनेता से बेहतर करेगा।

भारतेंदु के बाद नाटककार रंगमंच के प्रति उदासीन रहे जिससे हिंदी रंगमंच का विकास रूक गया है। लक्ष्मीनारायण मिश्र के कुछ नाटक आधुनिक साँचे में जरूर ढले हैं, लेकिन विषयवस्तु और विचार की दृष्टि से वे नितांत पुराने लगते हैं। अश्क पाश्चात्य तकनीक से परिचित है। अपने अध्ययन, ज्ञान और अनुभव के समन्वय से 'अश्क' ने हिंदी नाटकों का पाश्चात्य टेकनीक से सजाया और उसे रंगमंच से संबद्ध किया।

रंगमंच के प्रति अश्क की इतनी सजगता उन्हें केवल सफल नाटक लिखने के ही योग्य नहीं बनाती, बल्कि वह इस बात की भी द्योतक है कि भविष्य में नाटककारों के सहयोग से ही रंगमंच का पूर्ण विकास संभव है। इस विषय में अश्क का यह विश्वास ठीक है कि - रंगमंच की उचित प्रगति तभी होग कि जब एक ओर उसकी बनावट अति आधुनिक होगी, दूसरी ओर नए-नए नाटकों के रूप में उसे नया रक्त मिलेगा।

''अभिनेता की दृष्टि से 'अश्क' के समस्या एकांकीयों में यथेष्ट परिपक्वता है। अधिकांश एकांकियों में एक ही दृश्य है, जहाँ कहीं एकाधिक दृश्य है वहाँ भी सेटिंग एक ही है। पीठिका, वातावरण, प्रारंभिक संकेत, सेटिंग्ज की एक ही दिग्दर्शक की दृष्टि रखा है।''[27]

उनके एकांकियों में दृश्यविधान, स्टेज इफेक्ट तथा पात्रों की वेशभूषा, रूपवय, स्वभाव, कार्य व्यापार आदि के पूरे विविरण दिए गए हैं। रंगसूचनाएँ विस्तृत एवं व्यापक हैं जिनसे निर्देशक को सुविधाएँ प्राप्त हो जाती हैं। 'अश्क' के समस्या एकांकी नाटक मूलतः रंगमंच के लिए लिखे गए हैं। डॉ. रामचरण महेंद्र ने लिखा है - ''अश्क के नाटकों में एक और भी विशेषता है जिसे स्थापत्य संतुलन कहते हैं। एक इमारत जिसके सभी अंग भली भाँति संवारकर शिल्पी बनाए हों, जिसको एक निगाह से देखने पर संपूर्णता का आभास हो। ऐसे एकांकी का निर्माण साहित्यिक वस्तुकला का ही करतब कहा जा सकता है।''[28]

'अश्क' ने नाट्य शिल्प की उत्कृष्टता का रहस्य उनका अपना जीवन है। जीवनभर उन्होंने संघर्ष किया है। अनेक मोड़ों को समझकर सही रास्ता खोजा है। जीवन के विराट अनुभवों में से कहाँ से क्या मिला और कैसे उसने नाटक का रूप धारण कर लिया, इसका वर्णन अत्यंत कठिन है।

यद्यपि हिंदी में रंगमंच कमी है, फिर भी 'अश्क' के अधिकांश नाटक एमेचर रंगमंच पर खेले जा चुके हैं। वे जितना परिश्रम नाटक लिखने में करते हैं, उससे कही अधिक उसके दिग्दर्शन में करते हैं। स्वास्थ्य ठीक न रहने पर भी वे निर्देशक तथा अभिनेताओं को सहयोग देते हैं। अभिनेता भले ही हार मान लें, पर अश्क जी का जान जुटे रहते हैं। नाटक की कठिन भूमिकाएँ स्वयं करके उन्हें दिखाते हैं। ''अश्क का दिल रोता है कि हमारा कोई मंच नहीं। अश्क की सबसे बड़ी महत्त्वाकांक्षा मंच खड़ा करने की है और यही 'अश्क' के सच्चे नाटककार के दर्शन होते हैं।''[29]

उपेंद्रनाथ अश्क एकांकी के रंगमंच के संदर्भ में लिखते हैं - ''मैं एकांकी के संदर्भ में इस सारे प्रसंग में सिर्फ इतना ही कहना चाहता हूँ कि जब हिंदी में सचमुच का जीवंत रंगमंच कायम होगा, तो बड़े नाटक खेलनेवाली मंड़लियों के साथ एकांकी खेलनेवाली मंड़लियाँ भी बनेगी, नई अभिनेता और निर्देशक एकांकी के मंच पर ही अपनी प्रतिभा आजमायेंगे और बड़े मंचों पर जायेंगे। एकांकी का मंच जीवंत रंगमंच की एक जरूरी कड़ी है। और जब भी जीवंत रंगमंच बना, एकांकी अपनी महत्त्वपूर्ण अदा करेगा, इसमें मुझे कोई संदेह नहीं है।''[30]

निष्कर्ष -

'अश्क' रंगमंच के निकट संपर्क में रहे, इसलिए उन्होंने अपने नाटकों में पूर्ववर्तियों से प्राप्त साहित्यिकता तो रखी ही है। और उन्हें मंचोपयी भी बनाया है। उनके नाटकों में दृश्ये और श्रव्य दोनों तत्त्व हैं। वे जितने रंगमंच की कला गुणों से विभूषित है उतने ही सुपाठ्य है। अश्क और जगदीशचंद्र माथुर जैसे सुरूचिपूर्ण, मनोवैज्ञानिक और अभिनय नाटक लिखनेवाले नाटककार हिंदी में बहुत ही कम हैं। 'अश्क' हिंदी नाट्य कला को एक नया मोड़ दिया है।

5.5 *देशकाल वातावरण -*

उपेंद्रनाथ 'अश्क' के एकांकी नाटकों में देशकाल की अनुरूपता का ध्यान रखा है। कलाकार अपने युग-प्रभाव से अछुता नहीं रह सकता। उनकी कृति युगीन-विचार धारा से प्रभावित रहती है। कथावस्तु का संबंध जिस देशकाल के साथ होगा उसके अनुसार ही नाटक में वातावरण का निर्माण करने की आवश्यकता होती है। ऐसा होने से ही नाटक सदोष बनता है। नाटक में ऐसी घटनाओं का चित्रण करना पड़ता है जिससे अभिनय करने में सुलभता आ सके।

देशकाल में पात्रों की भाषा की ओर भी ध्यान रखना पड़ा है। अश्क जी ने इसका भी बड़ी चतुराई से प्रयोग किया है। वे एकांकी नाटकों में मध्यवर्गीय समाज की भाषा का चित्रण किया है। एकांकी नाटकों में आधुनिक युवकों की स्थिति का चित्रण किया है। आधुनिक युवक किस तरह युवतियों के पीछे पागलों की तरह घुमते हैं और किस तरह उसके दिवाने हो जाते है, इसका भी पता वातावरण द्वारा मिल जाता है। आज की प्रेम विवाह की समस्या, नौकरों की समस्या, धार्मिक समस्या, राजनीतिक समस्या का संकेत एकांकी नाटकों में वातावरण से मिल जाता है

उपेंद्रनाथ 'अश्क' के एकांकी नाटकों में देशकाल वातावरण भारतीय है। वे भारत देश के वर्तमान युग का सही चित्रण एकांकी नाटकों में किया है। एकांकी नाटकों का वातावरण कथानक और पात्रों के अनुकूल है। कहीं भी देशकाल वातावरण को दूषित नहीं होने दिया है। एकांकी नाटकों का देशकाल वातावरण शहरी और ग्रामीण जीवन से संबंधित है। 'नानक इस संसार में' एकांकी नाटक में शहरी का चित्रण इस प्रकार है - गुप्ता कहते हैं - ''तुम अब भी मुझे वही दुकड़ि क्लर्क समझती हो कि इन सब के मुँह लगता फिरूँ। मकानों की तंगी के कारण मुझे बंगला नहीं मिला कि मैं इस गली में पड़ा सड़ रहा हूँ, नहीं बाकी मकान भी किराए पर चढ़ाकर सिविल लाइन्ज में चला जाता। चलो, चलो अंदर चलो। अब तुम्हें इस तरह बहार निकल कर इन अनपढ़ों के मुँह न लगना चाहिए।''[31] इसी प्रकार 'आपस का समझौता' एकांकी में शहरी का चित्रण इस प्रकार है - डॉ. वर्मा कहता है - ''मैं कहाता हूँ शीला, यह स्कीम अगर चल निकली तो मैं शहर भर सब डाक्टरों से कमीशन तय कर लूँगा और फिर इस मकान या दुकान के किराये की बिसात ही

क्या ! कितने डाक्टर हैं लाहौर शहर में ! देखो कल ही ब्रजलाल बात करूँगा।''[32] उपेंद्रनाथ अश्क जी ने देश की वर्तमान स्थिति का यथार्थ चित्रण पात्रों के माध्यम में किया है।

'पक्का गाना' एकांकी में फिल्म कला के क्षेत्र में पूंजीपतियों की धाँधली वृत्ति के विषय में दीपक कहता है - ''पूँजीपती इस मशीन से जो कुछ पैदा करना चाहता है, वह आपका आर्ट नहीं, बल्कि रुपया है। उसे गालियाँ खाकर भी रुपया मिल जाय तो उसे इससे भी झिक न होगी। वह धड़ा-धड़ ऐसी फिल्में बनाएगा, जिन में सरमायादारों को गालियाँ मिले और उसकी जेब गर्म हो। लेकिन ज्योंही पब्लिक उनसे उकताई कि उसने फिर स्टंबाजी शुरू की। सरमाये का अधिकार इन्डस्ट्री से हटे तो कुछ हो !''[33]

ये शब्दकला के क्षेत्र में पूँजी की अल्मारी का विरोध करते हैं और कला के क्षेत्र को गंदा करनेवाले पूँजी के प्रभाव की यथार्थता को उद्‌घाटित करते हैं।

इस प्रकार एकांकी नाटकों में कथावस्तु और पात्रों के अनुकूल देशकाल वातावरण का यथार्थ चित्रण प्रस्तुत किया है।

5.6 शैली -

एक सिद्‌धहस्त नाट्‌यशिल्पी होने के साथ-साथ 'अश्क' जी उपन्यासकार, लेखक और कवि भी रहे हैं। और उन साहित्य-रूपों के संस्कारों का सूक्ष्म प्रभाव उनके नाट्‌य शिल्प पर पड़ा है। अश्क के कवि का योग भी उनके कुछ एकांकी नाटकों में प्रचुर मात्रा में मिलता है। अश्क की शैली का सबसे बड़ा गुण उसकी उत्फुलता है।

शैली में वस्तुचयन और वस्तुविन्यास तथा भाषा की प्रभावमानता और टकसालीपन का बड़ा हाथ है। 'अश्क' की शैली का बड़ा गुण-विशेषकर उनके गंभीर एकांकी नाटकों में उनकी प्रतीकात्मकता या सांकेतिकता है। शैली का संबंध रचना के साथ-साथ रचनाकार से भी होता है। इसलिए रचनाकार का परिवेश, अनुभव, शिक्षा, संस्कृति, रुचि आदि का भी उसके निर्माण में विशेष महत्त्व होता है। शैली में लेखक का व्यक्तित्व अंतर्हित रहता है। अत: शैली एक कलात्मक उपलब्धि है, उसे अर्जित करना पड़ता है।

'अश्क' जी की भाषा शैली अपनी एक विशेषता है। उन्होंने एकांकी नाटकों में वातारण, परिस्थिति और काल के अनुसार विविध शैलियों का प्रयोग किया है।

'लक्ष्मी का स्वागत' एकांकी नाटक में उनकी शैली की यह विशेषता दृष्टिगोचर हो जाता है। 'लक्ष्मी का स्वागत' का नाम ही संकेतात्मक है। इसके अतिरिक्त फानूस का प्रतीक बच्चे के जीवन का प्रतीक है। सुरेंद्र कहते हैं कि अरूण इस संसार से जा रहा है। फानूस का गिरना बता देता है कि अरूण दूसरे कमरे में खत्म हो गया है।

'देवताओं की छाया में' और 'लक्ष्मी का स्वागत' एकांकी नाटक में हल्के-हल्के प्रतीकों और संकेतों से 'अश्क' की शैली में जो धारा क्षीण रेखा सी आरंभ हुई है। 'चरवाहे' के एकांकी नाटकों तक पहुँचते-पहुँचते यौवन भाँति नदी सी बह चलती है। 'चरवाहे' एकांकी नाटक में जड़ वस्तुएँ ही जंगम वस्तुओं का प्रतीक नहीं बनती, बल्कि जंगम वस्तुएँ भी, यहाँ तक कि जानदार मानव तक गहन विचारों का प्रतीक बनते हैं।

'चरवाहे' की भूमिका में इस ओर स्पष्ट संकेत है - चरवाहे के नाटकों की शैली इससे पहले और बाद लिखे गए नाटकों से भिन्न है। इस संग्रह का प्रत्येक नाटक चाहे वह सामाजिक हो अथवा रोमाण्टिक दु:खद हो अथवा सुखद, व्यंग्य हो अथवा प्रहसन, विभिन्न संकेतों और प्रतीकों सहायता से आगे बढ़ता है। इन्हीं प्रकट अथवा परोक्ष प्रतीकों अथवा संकेतों के पर्दे में विषय वस्तु का ताना-बाना उलझता-सुलझता रहता है। ये प्रतीक जड़ हो या जंगम, प्राय: रंगमंच पर आते हैं, लेकिन परोक्ष ही में रह कर भी ये नाटक पर भारी प्रभाव डालते हैं। 'चरवाहे' में पात्र स्वयं प्रतीक बन जाते हैं। रत्नी यदि उद्यंड, अल्हड़, परिणाम से निश्चित, उड़ने को कर्म करने को आतुर यौवन का प्रतीक है तो कांत उस प्रौढ जवानी का प्रतीक है।

'चुंबक' एकांकी में लोह चून के दो कणों, 'सूखी डाली' में वट और सूखी डाली का प्रतीक है। पात्रों की भावनाओं, सूख दु:ख, हर्ष-विषाद के साथ प्राकृति की अनुकूलता संकेतों और प्रतीकों के द्‌वारा व्यक्त कर देना अश्क की नाट्‌य शैली की विशेषता है।

'अश्क' की नाट्‌य शैली सबसे बड़ी विशेषता यह है कि जीवन वैधिव्य के अनुभव के प्राप्त वस्तु सत्यों को वे रंगमंच पर अपने शिल्प चातुर्य के बल पर इस यथार्थ रूप से उद्‌घाटित

करते हैं। दर्शक की अनुभूति उससे प्रभावित होकर उसमें अपने जीवन की यथार्थता का किसी-न-किसी रूप से दर्शन पाती है।

अश्क नाटककार भी है और कवि भी। उनकी नाट्य शैली को उनके कथाकार और कवि का योग मिलता है। 'अश्क' के कवि योग भी कुछ एकांकी नाटकों में प्रचुर मात्रा में दिखाई देता है। 'चरवाहे', 'चिलमन', 'चुंबक', 'पक्का गाना' आदि एकांकियों में इस बात का प्रमाण है।

'पक्का गाना' इस एकांकी नाटक में कविता नईम के शब्दों में -

''लंबे-लंबे बाल हैं तेरे गोरे-गोरे गाल हैं तेरे
नयनों में कुछ ऐसा रस है मद भी जिसके आगे बस है
लंबी सुंदर नाक है तेरी सूरत कुछ बेबाक है तेरी
भूख में यह बेवाकी लेकिन है जैसे मिट्टी का बर्तन
एक बार गर हाथ छूटे जुड़े न, एक बार जो टूटे।''[34]

निष्कर्ष -

'अश्क' जी के एकांकी नाटकों में नाट्य शैली, संवाद, शैली, प्रतीकात्मक शैली, व्यंगयात्मक शैली, दृश्य शैली आदि शैली का प्रयोग किया है। उनके एकांकियों की भाषा शैली संक्षिप्त और सुंदर है। भाषा प्रवाहमयी चुस्त, परिस्थिति अनुरूप और पात्रानुकूल बनी है साथ ही उसमें चंचल व्यक्तित्व की झलक भी मिलती है।

5.7 उद्देश्य -

किसी भी साहित्य विधा का कोई उद्देश्य आवश्य होता है। साहित्य हमारे आत्माभिव्यक्ति का अविष्कार है। साहित्य से ही 'सत्यम्, शिवम्, सुंदरम्' की निर्मिति होती है। साहित्य हमें जीवन में जीने का मार्ग दिखाता है। साहित्य में हमें स्वजनों की तरह सलाह देता है। किसी भी साहित्य कृति का उद्देश्य महान और मंगल होना चाहिए। कृति हमेशा उद्देश्य को सामने रखकर ही लिखि जाती है। उपेंद्रनाथ अश्क के एकांकी नाटक भी उद्देश्यपूर्ण हैं।

उपेंद्रनाथ अश्क के एकांकी नाटकों का उद्देश्य यह स्पष्ट करना है कि प्रेम तथा विवाह के क्षेत्र में कुछ चरित्रगत कमजोरियाँ, प्रबुद्ध और आकर्षक नारी के जीवन को निराशा तथा विरक्ति में किस प्रकार फँसा देता है यह दिखाया है।

उपेंद्रनाथ अश्क जी ने 'आपस का समझौता' एकांकी में आजकल के डाक्टरों का लक्ष्य रोग मुक्ति नहीं पैसा कमाना बन गया है। डॉक्टर लोग अपने स्वहित के लिए एक मनुष्य को लाभ की जगह हानि पहुँचाने में नहीं हिचकते हैं। आज नैतिकता और सेवाभावना का मूल्य पैसा बन चुका है।

'अंधी गली' एकांकी में नाटककार ने हमारी शासन व्यवस्था पर तीखा व्यंग्य किया है। जब हम आजादी के लिए संघर्ष कर रहे थे तो हमारा नारा था कि 'आजादी किसान मजदूर की होगी' किंतु आज प्रत्येक बात के लिए बहाने बनाए जा रहे हैं। आज सरकारी अधिकारी कमीशन अधिक लेते हैं काम कम करते हैं। योजनाएँ अधिक होती हैं किंतु कुछ ही कार्यरूप में परिणत होती है। इस एकांकी में अंधी गली हमारी आज की निम्नमध्यवर्गीय समस्या है। इसमें नित्य-प्रति होनेवाले झगड़े और उनके माध्यम से निम्नवर्गीय जीवन और मनोविज्ञान की झलक देता है।

एकांकीकार 'अश्क' 'पापी' इस एकांकी में यह संकेत दिया है - भारतीय नारी पति के विश्वास के सहारे जीवित रहती है। अत: पुरुष विवेकवान होना चाहिए। अत: अपने पतन के साथ-साथ दूसरे के पतन का भी कारण बन जाता है।

5.8 संकलन-त्रय -

अश्क जी ने प्राय: ऐसे ही एकांकी अधिक लिखे हैं, जिनमें काल विशेष से संबंध घटनाओं का निरूपण हुआ है। पात्रों के किसी एक या सीमित कार्य को प्रस्तुत किया गया है। घटनाओं का प्रदर्शन भी लगभग एक सीमित क्षेत्र में ही दिखाया गया है। इसके साथ ही अश्क जी ने ऐसे एकांकी भी लिखे हैं, जिनमें संपूर्ण कथावस्तु को एक ही दृश्य में दिखाया गया है और ऐसे भी एकांकी लिखे हैं, जिनमें एक से अधिक दृश्यों का प्रयोग करके संपूर्ण कथावस्तु को विभाजित किया गया है। फिर भी उनमें काल, कार्य एवं स्थान की एकता का बराबर ध्यार रखा गया है। इस प्रकार

अश्क जी ने 'संकलन-त्रय' का निर्वाह करते हुए एकांकियों की रचना की है और उनकी संकलन-त्रय संबंधी विशेषताएँ इस प्रकार हैं -

5.8.1 काल-संकलन -

जहाँ एकांकीकार किसी एकांकी की संपूर्ण घटनाओं को किसी एक निश्चित समय में ही घटित होता हुआ अंकित करता है, वहाँ 'काल-सकंलन' होता है। अश्क जी ने अपने एकांकियों में प्राय: संपूर्ण घटनाओं को इसी तरह घटित होता हुआ दिखाया है कि वे कुछ घंटों या सीमित समय में ही समाप्त हो गई और संपूर्ण कथावस्तु के लिए अधिक अवधि या लंबे काल का प्रयोग नहीं किया है। जैसे - 'लक्ष्मी का स्वागत' एकांकी के शुभारंभ का समय दिया गया है - नौ दस बजे सुबह। थोड़ी देर में ही बच्चे की भयंकर दशा हो जाती है, उधर आँधी और तूफान की आवाज सुनाई देती है और उसी समय छाते लगाए एवं बरसाती पहने सियालकोट के कुछ सज्जन रोशन की दूसरी शादी के लिए शगुन लेकर आ जाते हैं। थोड़ी देर सुरेंद्र और रोशन की माँ की बातें होती हैं, कुछ देर रोशन और उसकी माँ की भी बातें चलती हैं और फिर उधर रोशन के पिता तो शगुन लेकर रोशन की माँ को बधाई देते हैं तथा रोशन अपने लड़के की लाश लेकर कमरे से बाहर निकलता है। यहाँ एकांकी समाप्त हो जाता है। इस तरह एक सीमित समय में ही संपूर्ण घटनाएँ बड़ी शिघ्र गति से समाप्त हो जाता है।

'अश्क' जी कृत 'सूखी डाली' एकांकी के प्रथम दृश्य का शुभारंभ दोपहर से काफी पहले ही होता है, क्योंकि लेखक ने संकेत दिया है कि 'दोपहर होने में अभी काफी देर है।' इसके बाद पहले बड़ी बहू और इंदु की बातें चलती हैं, फिर छोटी भाभी और मँझली बहू भी बातों में आ सम्मिलित होती हैं। तदपश्चात् दूसरा दृश्य दोपहर से आरंभ होता है, जबकि दादा मूलराज भोजन करके आराम कर रहे हैं और बरगद की टूटी डाल से खेल रहे हैं। यह दृश्य दादा, कर्मचंद, परेश और इंदु की बातों के साथ थोड़ी देर में ही समाप्त हो जाता है। इस तरह अश्क जी ने भले ही 'सूखी डाली' एकांकी को तीन दृश्यों में विभाजित किया है, परंतु तीनों ही दृश्य दोपहर से कुछ समय पूर्व आरंभ होकर दोपहर के कुछ समय बाद तक अर्थात् एक सीमित एवं निश्चित अवधि में ही समाप्त हो जाते हैं तथा 'काल-संकलन' को सजीव रूप प्रस्तुत करते हैं। ऐसे ही 'चुंबक' एकांकी का शुभारंभ

दिन के तीसरे पहर से होता है और कुछ ही देर में सरिता के चुपचाप चले जाने एवं गोपा को गौतम की वास्तविकता का पता चलने पर एकांकी समाप्त हो जाता है। ऐसे ही 'फादर्ज' एकांकी को लेखक ने बारह दृश्यों में विभाजित किया है। परंतु घटनाओं की गति इतनी तीव्र है कि दृश्यों के मध्य का व्यवधान पता नहीं चलता और 'काल-संकलन' का निर्वाह भी किसी सीमा तक हो गया है।

'आपस का समझौता' एकांकी का पहला दृश्य सुबह आठ बजे से आरंभ होकर डॉ. वर्मा और डॉ. कपूर की बातों में ही थोड़ी देर में समाप्त हो जाता है। दूसरा दृश्य रात को नौ बजे से आरंभ होकर डॉ. वर्मा और श्रीमती वर्मा की बातों में कुछ क्षणों में ही समाप्त हो जाता है। फिर तीसरा दृश्य दूसरे दिन के सुबह नौ बजे से आरंभ होकर डॉ. वर्मा, रोगी, डॉ. ब्रजमाल और परतूल के वार्तालाप में लगभग एक घंटे में समाप्त हो जाता है। इस तरह इस एकांकी की संपूर्ण घटनाएँ पहले दिन के सुबह आठ बजे से लेकर दूसरे दिन प्राय: दस बजे तक घटित होती हुई दिखाई गई हैं। अत: यहाँ भी 'काल-संकलन' का निर्बाह हुआ है।

5.8.2 कार्य-संकलन -

'अश्क' जी ने अपने एकांकियों में प्राय: किसी एक ही प्रमुख कार्य को अथवा सीमित कार्य को प्रस्तुत करते हुए 'कार्य-संकलन' का निर्वाह भी अत्यंत सफलतापूर्वक किया है। जैसे - 'पापी' एकांकी का प्रमुख कार्य है - भारतीय मध्य परिवार की उस व्यथित एवं पीड़ित नारी का चित्रण करना, जो एक ओर तो सास के कठोर व्यवहार एवं अत्याचार से संतृप्त है और दूसरी ओर उसी के पति द्वारा उसी की बहन से प्रेम करने के कारण सौतिया डाह में संत्रस्त है। संपूर्ण घटनाएँ इसी कार्य की पूर्ति करती हुई दिखाई देती हैं। 'चुंबक' एकांकी का मुख्य कार्य है - लौह-चूर्ण की तरह चुंबक की ओर खिची चली जानेवाली ऐसी दो युवतियों का चित्रण करना, जिनमें से एक तो वास्तविकता को जानकर उस आकर्षण के जाल से मुक्त हो जाती है, किंतु दूसरी अधिक भावुक होने के कारण आकर्षण में लीन रही आती है। अन्य समस्त व्यापार इसी कार्य की पूर्ति कर रहे हैं। 'अधिकार का रक्षक' एकांकी का प्रमुख कार्य है - आधुनिक अवसरवादी नेताओं के ढोंगी रूप का उद्घाटन करना। संपूर्ण घटनाओं की योजना इसी कार्य की पूर्ति हेतु की गई है। 'तौलिये' एकांकी का मुख्य कार्य है - एक व्यक्ति की सुरूचि, सभ्यता और सफाई की उस सनक का निरूपण करना,

जिससे परिवार में संघर्ष पैदा हो जाता है और व्यर्थ ही दूसरे की भावनाओं को आघात पहुँचता है। संपूर्ण अन्य व्यापार इसी एक कार्य की पूर्ति करते हुए दिखाए गए हैं।

इसी तरह अश्क जी अन्य एकांकियों में भी प्राय: एक 'कार्य' को ही अंकित करने के लिए अथवा किसी सीमित कार्यवाही को उद्घाटन करने के लिए सभी एकांकियों में ऐसी ही घटनाओं की योजना की है, जो उसी एक 'कार्य' की पूर्ति में सहायक सिद्ध हुई है। तथा जिनके द्वारा उसी एक सीमित 'कार्य' का उद्घाटन हुआ है। इससे स्पष्ट है कि अश्क जी ने 'कार्य-संकलन' का निर्वाह भी सफलतापूर्वक किया है।

5.8.3 स्थान संकलन -

किसी भी एकांकी की संपूर्ण घटनाओं एवं समस्त कार्य-व्यापारों का एक सीमित क्षेत्र में घटित होना 'स्थान-संकलन' कहलाता है। रंगमंच के विचार से स्थान-संकलन का अत्यधिक महत्त्व है, क्योंकि एकांकी का घटना-चक्र तीव्र गति से चलता है और रंगमंच पर दृश्य-परिवर्तन का कार्य घटनाक्रम की तीव्र गति के अनुसार संपन्न नहीं हो सकता। इसी कारण प्राय: एकांकीकार स्थान ऐक्य का निर्वाह किया करते हैं, जो व्यवहार एवं शास्त्र दोनों ही दृष्टियों से समीचीत हैं। अश्क जी ने भी इसी स्थान ऐक्य अथवा स्थान-संकलन की ओर अत्यधिक ध्यान दिया है। इसी कारण आपके 'पापी' एकांकी की समस्त घटनाएँ शांतिलाल के घर में स्थित उस एक कमरे में ही घटित हो जाती हैं, जो बैठक का भी काम देता है। 'चुंबक' एकांकी की घटनाएँ मध्य पंजाब के एक गाँव में घटित होती हैं। 'चरवाहे' एकांकी के लिए दक्षिण पंजाब का एक गाँव चुना है और वही समस्त कार्य-व्यापार संपन्न होते हैं। 'तौलिये' एकांकी की संपूर्ण घटनाएँ नई दिल्ली में स्थित वसंत के ड्राइंग-रूम, रसोई घर एवं स्नानागार में ही घटित हुई दिखाई गई है। 'जोंक' इस एकांकी के संपूर्ण कार्य-व्यापार भोलानाथ के निवास-स्थान में स्थित बरामदे के अंतर्गत ही संपन्न हो जाते हैं।

इस प्रकार अश्क जी के एकांकियों में से जिनमें केवल एक ही दृश्य है, वहाँ तो संकलन-त्रय का निर्वाह सरलतापूर्वक हो गया है, परंतु जहाँ आपने कई दृश्यों का प्रयोग किया है, वहाँ पर भी संकलन-त्रय का निर्वाह बड़ी कुशलता, एकाग्रता एवं सजगता के साथ किया है, जिससे

एकांकियों में एकरूपता, कसावट एवं मंचीय सुविधाएँ आ गई हैं और आपके सभी एकांकी अभिनय बन गए हैं।

निष्कर्ष -

उपेंद्रनाथ 'अश्क' के एकांकियों की कथावस्तु पर्याप्त सुगठित और प्रभावोत्पादक है। उन्होंने मध्यवर्गीय समाज जीवन की नस-नस पहचानने की कोशिश की है। पंजाब के मध्यवर्गीय परिवार से संबंधित कथावस्तु को समाज के दर्पण के रूप में दिया गया है। 'अश्क' के एकांकियों के पात्र हमारे जीवन का दर्पण बनकर प्रस्तुत होते हैं। इनके एकांकी नाटकों में रंगमंच पर न आनेवाले पात्रों का अन्य पात्रों के संवादों द्‌वारा परिचित कराने की कोशिश की है। इनके एकांकी नाटकों के पात्र नायक और नायिका प्रदान हैं। एकांकी नाटकों में संवाद कहीं-कहीं छोटे हैं और कहीं बड़े हैं, फिर भी समजने में आसान हैं। इनके एकांकियों में गाँव और शहर का चित्रण हुआ है। एकांकी नाटकों की भाषा शैली प्रतीकात्मकता या सांकेतिकता है। भाषा के संदर्भ में अश्क जी कहते हैं - भाषाएँ तमाम अक्षम होती हैं, लेखक ही उन्हें सक्षम बनाते हैं और सक्षम लेखक, जिनके दिमाग में उलझाव नहीं होता है और जो क्रम से नहीं घबराते, सूक्ष्मतम अनुभूतियों को अपनी भाषा के माध्यम से व्यक्तित्व देते हैं।

'अश्क' जी ने एकांकियों में नाट्य शैली, संवाद शैली, प्रतीकात्मक शैली, व्यंग्यात्मक शैली, दृश्य शैली आदि शैलियों का प्रयोग किया है। इनके एकांकियों में अपने एकांकियों के माध्यम से हमारे सामाजिक जीवन के किसी-न-किसी यथार्थ को प्रस्तुत किया है, समाज की किसी-न-किसी ज्वलंत समस्याओं को नाटकीय रूप दिया है अथवा हमारे दैनंदिन जीवन में व्याप्त किसी-न-किसी विषमता, विद्रुपता अथवा विसंगति को कुशलतापूर्वक हमारे सामने पास्थित किया है। 'अश्क' जी ने प्राचीन परंपराओं, रूढ़ियों, विसंगतियों, विषमताओं एवं विद्रुपताओं में ग्रस्त भारत के जर्जर एवं हताश मध्य वर्ग के प्रेम, संघर्ष, घृणा, रुदन, विषाद, पीड़ा, वेदना आदि का यथार्थ एवं स्वाभाविक चित्र प्रस्तुत करने के उद्‌देश्य से अपने एकांकियों का निर्माण किया है। इनके एकांकियों का देशकाल वातावरण भारतीय है। उन्होंने भारत देश के वर्तमान युग का सही चित्रण किया है। इनके एकांकी नाटकों में 'संकलन-त्रय' का निर्वाह करते हुए एकांकियों की रचना की है। उनमें काल, कार्य एवं स्थान की एकता का बराबर ध्यान रखा गया है।

संदर्भ सूची

1. डॉ. जगदीशचंद्र माथुर - नाटककार 'अश्क', पृ. 15
2. वही, पृ. 347
3. वही, पृ. 461
4. डॉ. उमाशंकर सिंह, समस्या नाटककार 'अश्क', पृ. 95
5. डॉ. जगदीशचंद्र माथुर - नाटककार 'अश्क', पृ. 168
6. वही, पृ. 44
7. वही, पृ. 87
8. वही, पृ. 352
9. उपेंद्रनाथ 'अश्क', पच्चीस श्रेष्ठ एकांकी संग्रह, पृ. 558
10. डॉ. जगदीशचंद्र माथुर - नाटककार 'अश्क', पृ. 99
11. डॉ. उमाशंकर सिंह, समस्या नाटककार 'अश्क', पृ. 109
12. डॉ. जगदीशचंद्र माथुर - नाटककार 'अश्क', पृ. 103
13. डॉ. रामकुमार वर्मा, एकांकी कट्टा, पृ. 23
14. डॉ. जगदीशचंद्र माथुर - नाटककार 'अश्क', पृ. 67
15. उपेंद्रनाथ 'अश्क', पच्चीस श्रेष्ठ एकांकी संग्रह, पृ. 304
16. वही, पृ. 331
17. वही, पृ. 544
18. उपेंद्रनाथ 'अश्क', चरवाहे, पृ. 44
19. वही, पृ. 78
20. उपेंद्रनाथ 'अश्क', तौलिये, पृ. 78
21. उपेंद्रनाथ 'अश्क', पच्चीस श्रेष्ठ एकांकी संग्रह, पृ. 252
22. उपेंद्रनाथ 'अश्क', चरवाहे, पृ. 44

23. उपेंद्रनाथ 'अश्क', चरवाहे, पृ. 12

24. उपेंद्रनाथ 'अश्क', पच्चीस श्रेष्ठ एकांकी संग्रह, पृ. 496

25. डॉ. उमाशंकर सिंह, समस्या नाटककार 'अश्क', पृ. 76

26. वही, पृ. 126

27. उपेंद्रनाथ 'अश्क', बड़े खिलाड़ी, इतिहास के अंदर इतिहास, पृ. 26

28. डॉ. रामचरण महेंद्र - हिंदी नाटक का उद्भव और विकास, पृ. 170

29. भैरव प्रसाद गुप्त, व्यक्तित्व नाटककार 'अश्क', पृ. 466

30. उपेंद्रनाथ 'अश्क', पच्चीस श्रेष्ठ एकांकी संग्रह, पृ. 33

31. वही, पृ. 447

32. वही, पृ. 533

33. नाटककार 'अश्क', जगदीचंद्र माथुर, पृ. 173

34. उपेंद्रनाथ 'अश्क', पच्चीस श्रेष्ठ एकांकी संग्रह, पृ. 381